Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 6 | ISSN : 2581-6306

संस्कृत नाटकों में शिक्षा–व्यवस्था

डॉ. गटुलाल पाटीदार
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
पुष्पेन्द्र कुमार सेवक
संस्कृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया, उदयपुर (राज.)

शोध सारांश भारतीय मनीषियों ने मानव के भौतिक तथा आध्यात्मिक विकास हेतु शिक्षा को महत्त्वपूर्ण माना है। शिक्षा शब्द शिक्ष्–धातु धञ् प्रत्यय से बना है। शिक्षा का अर्थ है व्यक्ति का अनुशासित एवं सम्यक् विकास जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी तथा अपने समाज की उन्नति कर सके। शिक्षा वेद के छः अंगों में से एक अंग है। ''शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य'' शिक्षा को वेद का नाक कहा गया है। आश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत ब्रह्मचर्य आश्रम का प्रधान उद्देश्य ही विद्या की प्राप्ति करना है। शिक्षा द्वारा ही व्यक्ति अनुशासित होकर विविध ऋणों से मुक्ति हेतु प्रयत्न करता है। शिक्षित व्यक्ति अपने इहलोक को सुधारता है साथ ही पारलौकिक सुख प्राप्ति हेतु भी शुभ कर्मों में प्रवृत्त होता है। इसके द्वारा मानव ईश्वर+जीव+प्रकृति के रहस्य को जानता है। धर्म+अर्थ+काम+मोक्ष इन पुरुषार्थ चतुष्ट्य की प्राप्ति भी शिक्षा द्वारा ही सम्भव होती हैं। वह माता–पिता, आचार्य अतिथि की सेवा करता है तथा प्राणी मात्र के कल्याण हेतु सतत् प्रयत्नशील रहता है। शिक्षा द्वारा ही व्यक्ति का सर्वाङ्गीण विकास होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में ज्ञान को सर्वाधिक पवित्र बताया गया है। **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ।।**[प] शिक्षा के लिए हमारे प्राचीन ग्रन्थ कहते आये हैं–**''प्रथमे निर्जिता विद्या, द्वितीये नार्जितम् धनम्। तृतीये न तपस्तप्तम्, चतुर्थे किम् करिष्यति।।''** अर्थात् प्रथम अवस्था में यदि विद्या अर्जित न हो, द्वितीय में यदि धन अर्जित न हो, तृतीय में यदि पुण्य अर्जित न हो और चौथी अवस्था में अर्थात् वृद्धावस्था में मनुष्य तब क्या ही कर पायेगा।'' यहाँ पर संस्कृत के प्रमुख रूपकों में शिक्षा के अधिकार, तात्कालिक शिक्षा व्यवस्था, स्त्री–पुरुष शिक्षण, स्वास्थ्य शिक्षण, अनिवार्य एवं निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षण, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक शिक्षण एवं नारी शिक्षा पर परिशीलन किया जा रहा हैं।

कूटशब्द – संस्कृत, नाटक, रूपक, शिक्षा, अधिकार, शिक्षक, शिक्षण, स्त्री–पुरुष

स्त्री–पुरुष शिक्षण– हमारे समाज में लिंग भेद के कारण लड़कों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलवायी जाती हैं पर लड़कियों को प्रायः कम पढ़ाया जाता हैं। विशेष रूप से ग्रामीण समाज में लड़के और लड़की में आवश्यकता से अधिक भेदभाव किया जाता है। लड़कियों के खान–पान में, कपड़ों पर, शिक्षा में एवं व्यवहार

में लड़कों की अपेक्षा भेदभाव किया जाता हैं, जो कि बाल अधिकार का सरासर उल्लंघन है। इसके लिये शासन के साथ–साथ समाज सेवी संस्थाओं को आगे आकर लोगों को जागरूक बनाना होगा और लोगों को सही दिशा दिखानी होगी। भारतीय संस्कृति सदैव से ही मानव अधिकारों की पाषक रही है। जिसके विभिन्न प्रमाण हमें वेद, पुराण, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रंथों में मिलते हैं। ऋग्वेद का निम्न श्लोक मानव अधिकारों की रक्षा एवं शांति का संदेश देता हैं–**''अध्वर्य जिवातु भेषज्म सम्नों अस्ति द्विपते। समचतुष्पदे ! ओम शांति, शांति, शांति''** अर्थात् सभी मानव सम्बद्ध हो, सभी वनस्पति और जीव जन्तु जो सभी प्राणियों का आधार है, फलें–फूले, सभी पशुओं में परस्पर प्रेम हो, सभी मनुष्यों में सद्भावना हो, हर तरफ शांति ही शांति हो। सार्वजनिक घोषणा में प्रस्तावना के साथ 30 अनुच्छेद हैं। प्रस्तावना में मौलिक मानवाधिकारों, मानव की महत्ता तथा मनुष्य एवं स्त्री के समान अधिकारों की समानता में निष्ठा व्यक्त की गई है। इसी प्रकार हमारे संस्कृत रूपकों में भी स्त्री–पुरुष शिक्षण, शिक्षा आदि से सम्बन्धित कई दृष्टान्त मिलते हैं।

विक्रमोर्वशीयम् में उर्वशी एवं चित्रलेखा को भगवान बृहस्पति ने पराजिता नाम की शिखाबन्धिनी विद्या का उपदेश दिया था। चित्रलेखा का कथन **''हे सखी विश्वास करो निश्चय ही भगवान बृहस्पति ने पराजिता नाम की शिखाबन्धिनी विद्या का उपदेश देकर हम दोनों को ऐसा कर दिया है, कि जिससे देवताओं के शत्रु हमें आक्रान्त नहीं कर सकते।''**[पप]

कर्ण ने अस्त्र शिक्षा प्राप्त कि थी वह पहले कुन्ती से उत्पन्न होकर तब राधा के पुत्र के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ इसलिए वह युधिष्ठिर आदि पाँचों पाण्डवों का सबसे छोटा भाई माना जाता था। कर्णभारम् में शल्यराज के समक्ष अपनी अस्त्र शिक्षा के विषय में कर्ण कहता है कि **''यह समय अत्यन्त उपर्युक्त और अनेक दिनों से प्रतीक्षित दिन आ गया किंतु मेरी अस्त्र–शिक्षा इस समय व्यर्थ सिद्ध हो रही है और माता ने मुझे मना भी किया है कि (युधिष्ठिर आदि अपने छोटे भाइयों पर अस्त्र न चलाना'')**[पपप] शिक्षा पद्धति का वर्णन हमें अभिज्ञानशाकुन्तल में भी प्राप्त होता है। उसमें प्राचीन गुरुकूल परम्परा का वर्णन है। महर्षि कण्व का आश्रम भी एक गुरुकुल था कुलपति की देखरेख में ही विद्यार्थी गुरुकुलों में ब्रह्मचर्य धारण करते हुए शिक्षा प्राप्त करते थे। गुरु कुलपति कण्व का आश्रम मालिनी नदी के तट पर स्थित था वहाँ पर विद्यार्थी की दिनचर्या थी कि विद्यार्थी ही समिधा लाने जंगल में जाते थे। समिधाओं से यज्ञ हवन आदि धार्मिक क्रियाकलाप शिष्यों द्वारा किये जाते थे। **''समिदाहरणाय प्रस्थिता वयम्।''**[पअ]

शिक्षार्थी कन्याऐं वृक्ष सिंचन एवं पशु का पालन भी करती थी। राजा दुष्यन्त शकुन्तला को वृक्ष सिंचन करता हुआ देखते है। वृक्षों की वाटिका के दाहिनी और बातचीत जैसी सुनाई पड़ती है। वह कहता है कि **''ये तपस्वियों की कन्याएँ अपने–अपने शरीर के अनुरूप सींचने के घड़े से छोटे–छोटे वृक्षों को जल देने के लिए इधर ही आ रही है।''**[अ] शाङ्र्गरव, शारद्वत, अनसुया एवं प्रियवंदा आदि कण्व के गुरुकुल में विद्याध्ययन करने में संलग्न थे। अर्जुन श्रेष्ठ धनुर्धारी था। उसके बराबर में दूसरा कोई धनुर्धारी योद्धा नहीं था। कर्ण की

उसमें तुलना नहीं की जा सकती धृतराष्ट्र स्वयं अर्जुन की धनुर्विधा की प्रशंसा करते हैं। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा कि **''इन्द्र ने उसका कवच हरण कर लिया, वह वह अर्थरथ और प्रमादी है, कपट के द्वारा अर्जित विद्या भी विफल है, यह दयावान है, (हाँ) कर्ण अर्जुन की तुलना में तभी आ सकता है जब कि इन्द्र, अग्नि और शिव स्वयं अस्त्र–शिक्षक बने।''**[अप] रावण स्वयं चतुर्दश विधाओं का ज्ञाता था। प्रतिमानाटक के एक प्रसंग में राम स्वयं रावण की साधु रूप में सेवा करना चाहते हैं। रावण स्वयं को ज्ञानवान एवं विविध विद्याओं से युक्ति का कथन कहता है– **''अब मैं विप्रो की तरह व्यवहार करूँगा मेरा काश्यप गौत्र है। मैंने सांगोपांग वेद मनु का धर्मशास्त्र, माहेश्वर का योग शास्त्र, बृहस्पति का अर्थशास्त्र मेधातिथि का न्याय शास्त्र और प्रचेता का श्राद्ध कल्प पढ़ा है।''**[अपप]

स्वप्नवासवदत्तम् में ब्रह्मचारी लावाणक ग्राम से लौटते हुए अपना परिचय वासवदत्ता को देता है। **''श्रीमन् ! सुनिये मैं राजगृह से आया हूँ। वत्स (वत्सराज उदयन) के राज्य में एक लावाणक नामक ग्राम है वहाँ मैं वेद का विशेष अध्ययन करने के लिये रह चुका हूँ।''**[अपपप] तत्कालिन समय में वेद आदि का अध्ययन भी गाँवों में होता था। वेद आदि शास्त्रों के अध्ययन हेतु ब्रह्मचारी रहकर निवास करना पड़ता था। गुरुजनों के प्रति उदार भाव आदर्श भाव आदि उदयन एवं वासवदत्ता में देखा जाता है। महाराज उदयन के हृदय में अपनों से बड़ों के प्रति आदर भाव है। चतुर्थ अंक के अन्त में अतिथियों से मिलने हेतु वह तुरन्त तैयार हो जाता **है। ''महान् गुणों को और सत्कारों को करने वाले (महापुरुष) तो संसार में नित्य ही सुलभ है परन्तु उनको जानने वाले दुर्लभ (कठिनता) से प्राप्त होते हैं।''**[पग] घोषवती वीणा वासवदत्ता की प्रिय वीणा थी वीणा का ज्ञान उसे बजाने की शिक्षा उदयन ने प्रदान की थी उदयन वासवदत्ता का पूर्व सम्बन्ध गुरुशिष्या का था। राजा उदयन वासवदत्ता के प्रति अपनी प्रगाढ़ प्रीति का वर्णन करते हुए कहता है कि ''मैं वासवदत्ता को कभी भी भूल नहीं सकता। वह महाराजा प्रद्योत की पुत्री थी। वीणावादन सिखाने से मेरी शिष्या थी। इसी तरह वह मेरी पटरानी भी थी।''[ग] उत्तररामचरित में शिक्षा को निधि माना है। शिक्षा एक प्रकार से धन आदि के समकक्ष एवं उससे ऊपर माना गया है। लव की शिक्षा को देखकर राम एकाएक कह उठते है कि ''भुवनों की रक्षा के लिए मानों धनुर्वेद ही मूर्तिमान हो गया है, वेदरूप निधि की रक्षा के लिए मानो क्षात्रधर्म ने ही शरीर का आश्रय कर लिया है,''[गप]

वेणीसंहार नाटक में शस्त्रविधा का वर्णन है। इस प्रकार की अनेक शिक्षाओं एवं विद्याओं का उल्लेख प्राप्त होता है। महर्षि कण्व शकुन्तला के पालित पिता थे एवं आश्रम में रहने के कारण गुरु–शिष्य भी थे उन्होंने पतिगृहगमन के समय शकुन्तला को आवश्यक शिक्षा प्रदान की एवं पतिगृह में अनुकूल आचरण कर लक्ष्मी के उच्च पद को प्राप्त करने हेतु आशीर्वाद प्रदान किया। ''गुरुजनों की सेवा, सपत्नियों के साथ प्रियसखी जैसा व्यवहार, सेवकों के प्रति उदार व्यवहार, करना आदि इस प्रकार का आचरण करने वाली स्त्रीयाँ गृहलक्ष्मी के पद को प्राप्त कर लेती है तथा इसके विपरीत आचरण करने वाली स्त्रियाँ घर वालों को

दुःख उत्पन्न करने वाली ही होती है।''[गपप] इस प्रकार की आदर्श शिक्षा हमें नाटकों में देखने को मिलती है। आदर्श शिक्षाओं से आदर्श परिवार की स्थापना होती थी। तत्कालिन समाज में स्त्री–पुरुष में आदर्श तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित था परिवार में छोटे–बड़े सभी का ध्यान रखा जाता था।

उस समय में गृह शिक्षा के साथ–साथ संगीत शिक्षा का भी प्रचलन था ये शिक्षा अधिकांशतः पुरुषों की अपेक्षा स्त्रीयों को अधिक दी जाती थी। अभिज्ञानशाकुन्तल में हंसवती के द्वारा वीणा बजाने या संगीत अभ्यास का वर्णन है। उसकी संगीत स्वर लहरीयों को विदूषक कान लगा कर सुनता है। ''सम्भवतः माननीया हंसवती वर्णों या संगीत का अभ्यास कर रही है।''[गपपप] तत्कालिन समय में चित्रकला का अपना विशेष महत्त्व था चित्र के माध्यम से संवाद होता था। राजा दूसरे राजा को अथवा रानी अपने राजा को कोई चित्रफलक भेंटकर अपना विचार प्रकट करते थे। पहली सखी मिश्रकेशी से वार्तालाप करते हुए कहती है कि ''आर्य ! कई दिन हुए राजश्यालक मित्रावसु ने इस बगीचें में चित्र बनाने के लिये हम लोगों को महाराज के पास भेजा था।''[गपअ] षष्ठोऽङ्क में चेटी (हाथ में चित्रफलक लिये प्रवेश करके) महाराज। यह चित्रस्थ महारानी है (यह कहकर चित्रफलक दिखाती है)। राजा चित्र में देखकर रानी के रूप सौन्दर्य का विस्तार से वर्णन करता है। मालविकाग्निमित्रम् में शिक्षा से सम्बन्धित वर्णन प्राप्त होता है। इसमें अनेक शास्त्रों का वर्णन प्राप्त होता है। जिसमें सर्वप्रथम संगीतशास्त्र का वर्णन प्राप्त होता है। आचार्य गणदास और हरदत्त जो संगीतशास्त्र में पारङ्गत हैं, राजा के आदेश से संगीत एवं अभिनय का शिक्षण कार्य सम्पादित करते है, बकुलावलिका मालविका के शिक्षा (नाट्यशिक्षा) के विषय में समाचार जानना चाहती है। तब कुमुदिनी कहती है सखी ! इस प्रकार शिक्षा–कार्य में तल्लीन रहने के कारण परोक्षावस्था में होते हुए भी उस मालविका को महाराज अग्निमित्र ने कैसे देख लिया ?''[गअ] यहाँ पर मालविका के शिक्षा कार्य की चर्चा कर तत्कालिन स्त्री शिक्षा को दर्शाया गया है।

नाटक में ज्योतिष शास्त्र का भी उचित प्रयोग किया जाता है। ग्रहण के सम्बन्ध में कवि ने ज्योतिष शास्त्र की बातों का नाटक में सन्निवेश कराया है, तथा अन्त में चलकर वैद्यक शास्त्र की बातों का भी उल्लेख हुआ है। ''दंश स्थान का छेदन दाह और रक्तमोक्षण यह सभी उपचार सर्पदष्ट लोगों के जीवन के उपाय माने गये है।''[गअप] विदूषक को जब साँप ने काट लिया तब परिव्राजिका द्वारा यह प्रथम उपचार बताया गया। राजा कहता है कि इस समय विष वैद्य की आवश्यकता है, तब विषवैद्य ध्रुवसिद्धि को बुलाया जाता है। प्रथम अंक में संगीतशास्त्र का प्रमाण है। जिसमें मायुरी मार्जना का चित्रण है। ''संगीतशास्त्र में मुदङ्ग की इस जाति की धाप को मायूरी इसलिए कहते हैं कि उसके शब्द को सुनकर मयूर मस्त हो जाते है।''[गअपप] संगीतशास्त्र के पश्चात् नाटक में ज्योतिष शास्त्र का वर्णन प्राप्त होता है। ज्योतिष में भी ग्रहण सम्बन्धी ज्ञान इस नाटक से प्राप्त होता है। राजा इरावती के क्रोधित होने पर उन्हें क्रोध न करने हेतु कहकर उचित अनुचित का ज्ञान कराते हुए ग्रहण सम्बन्धी दृष्टान्त देता है। इससे स्पष्ट है कि तत्कालिन समय में ज्योतिषशास्त्र का भी चलन था।

राजा का कथन– ''अवसर शून्य अयोग्य स्थान में क्रोध करना तुम्हे शोभा नहीं देता। हे रमणीय रात्रि ! विना कारण के तुमने कब क्रोध का प्रकाशन किया ? अर्थात् कदापि नहीं। पूर्णिमा के बिना ही राहु ग्रहण से चन्द्रमण्डल कलुषित हो जाय, ऐसी बात किस रात्रि में भला होती हैं।''[गअपपप] भारतीय धारणा के अनुसार स्वाती नक्षत्र में मेघ से गिरा हुआ जल सीप के मुख में पड़कर मोती बन जाया करता है। आचार्य गणदास अपनी शिष्या मालविका को सत्पात्र मानता है। उसे वह जो कुछ शिक्षा प्रदान करता है, वह उसमें ऐसे भव्य और उत्कृष्ट रूप में परिणत होती है कि शिक्षक को उसकी तुलना उस जलबिन्दु से करनी पड़ती है। जो सीप के अन्दर पड़कर मोती बन जाता है। शिक्षा जलबिन्दू हैं, जो मालविका रूपी सीपी में जाकर मुक्ता तुल्य चमक उठती है। गणदास ने ज्ञान बेचने वाले को बनिया कहाँ है। ''लोग अध्यापक का पद प्राप्त कर लेने पर शास्त्रार्थ करने से भागते हैं, दूसरों की की गई निन्दा को सहन कर लेते हैं और केवल पेट पालने के लिए विधा पढ़ाते हैं। ऐसे लोग पण्डित नहीं वरन् ज्ञान बेचने वाले बनिया है।''[गपग] सच्ची शिक्षा के विषय में गणदास ने कहा है कि– ''जिस प्रकार आग में डालने से सोना काला नहीं पड़ता, वैसे ही जिस शिक्षक के सिखाने में किसी प्रकार की त्रुटि न हो, उसे ही सच्ची शिक्षा कहते है।''[गग]

स्वास्थ्य शिक्षण– लोगों को स्वास्थ्य के सभी पहलुओं के बारे में शिक्षित करना स्वास्थ्य शिक्षा (Health Education) कहलाती है। स्वास्थ्य शिक्षा ऐसा साधन है। जिससे कुछ विशेष योग्य एवं शिक्षित व्यक्तियों की सहायता से जनता को स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान तथा औपसर्गिक एवं विशिष्ट व्याधियों से बचने के उपायों का प्रसार किया जा सकता है।

विस्तृत अर्थों में स्वास्थ्य शिक्षा के अन्तर्गत दैहिक स्वास्थ्य, भावनात्मक स्वास्थ्य, बौद्धिक स्वास्थ्य तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य सभी आ जाते हैं। स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह ऐसा बर्ताव करता है जो स्वास्थ्य की उन्नति, रखरखाव और पुर्नप्राप्ति में सहायक हो। स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा जनसाधारण को यह समझाने का प्रयास किया जाता है कि उसके लिए क्या स्वास्थ्य प्रद और क्या हानिप्रद है तथा इनसे साधारण बचाव कैसे किया जाय। स्वास्थ्य शिक्षक ही जनता से संपर्क स्थापित कर स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा स्वास्थ्य संबंधी आवश्यक नियमों का उन्हें ज्ञान कराता है।

युनानी चिकित्सा विज्ञान का सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हिप्पोक्रेटस था जिसे पाश्चात्य जगत 'चिकित्साविज्ञान का जनक' कहा जाता है। 'युनानी' शब्द संस्कृत 'यवनानी' रूपातंर मात्र है, जो स्वयं 'यवन' शब्द से व्युत्पन्न है। पाणिनि के समय में यवनानी शब्द यवन की स्त्री के लिये प्रयुक्त होता था। स्वास्थ्य के विषय में स्वामी विवेकानन्द लिखते हैं। **''स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन होता है।''** कुशाग्र बुद्धि के लिये बालक का स्वस्थ रहना आवश्यक है।

खेलना–कूदना बच्चों के शारीरिक एवं सामाजिक विकास में लाभप्रद हैं। बालक को नियमित व्यायाम कर अपने शरीर को हष्ट पुष्ट बनाना चाहिये।

आज सबसे बड़ी आवश्यकता लोगों को संस्कारित करने की है। विक्रमोर्वशीयम् में पित्त की गर्मी के शान्त होने से व्यक्ति के स्वस्थ्या होने की बात कही गई है। विदूषक का राजा के प्रति कथन– ''हे महारानीजी ! इस राजा को भोजन (प्रिय वस्तु) शीघ्र ही दीजिए। पित्त की गर्मी के शान्त हो जाने से इसे स्वस्थ हो जाने दीजिए।''[गगप] प्रतिज्ञायौगन्धरायण के प्रारम्भ में रंगमंच पर स्वास्थ्य सम्बन्धी चर्चा की गई है। नटी का कथन– ''स्वप्न में मैंने जाति और कुल वालों को (अर्थात् अपने मायके के लोगों को) अस्वस्थ्य देखा। इसलिए चाहती हूँ कि आर्य कुशल–क्षेम जानने के लिए किसी पुरुष को भेजे।''[गगपप] अविमारकम् में कुरङ्गी नलिनिका से अपनी दासी के नहीं आने पर स्वयं की रुग्णावस्था का वर्णन करती है। ''भूतिक बाली सारिका भी सारे संसार की कथा ही कहने आ गई है। मेरी रोगावस्था जानने जो दासी आती है वह मुझ से आग्रह करके कुछ कह जाती है। अतः मैं चाहती हूँ कि कुछ देर प्रासाद पर बेठूँ।''[गगपपप] प्राचीन समय में रोगों की निवृत्ति हेतु रोगानुसार औषधि दी जाती थी एवं चन्दन आदि का लेप लगाया जाता था। ''रोग के कारण इसने चन्दन का लेप नहीं लगाया हैं, इसने गहने उतार दिये है, इसके सारे विलास लुप्त हो रहे हैं, फिर भी इसके अङ्ग निश्च्छल सौन्दर्य से रमणीय लगते हैं।''[गगपअ]

अविमारकम् में हरिणिका कुरङ्गी से स्वास्थ्य विषयक जानकारी चाहती है। वह उसके शीघ्र स्वस्थ्य होने की कामना करती है। ''जय हो राजकुमारी की। महारानी ने पूछा है कि इस समय शिर दर्द कैसा है ? यह दवा भी लगा लेने को कहा हैं।''[गगअ] कुरङ्गी हरिणिका से महारानी के स्वस्थ होने की जानकारी देती है। साथ ही औषधि के ग्रहण करने से ठीक होने की बात करती है। प्रतिमानाटकम् में ''अपि तातःकुशली'' इस वाक्य को कहा गया है जिससे सीता के निर्मल चरित्र और विशाल हृदयता की झलक मिलती है। उन्हें राम के राज्याभिषेक के समाचार की प्रसन्नता से पहले ही महाराज दशरथ के स्वास्थ्य की चिन्ता होती है। बाद में महाराज के द्वारा ही राज्याभिषेक की बात सुनकर हृदय में प्रसन्नता होती है। स्वप्नवासवदत्तम् में पद्मावती की सिरोवेदना का वर्णन प्राप्त होता है। पद्मिनिका विदूषक को सूचना देती है कि राजकुमारी पद्मावती सिरदर्द से दुःखित है। पद्मिनिका पद्मावती के सिर पर लेप (मलहम) लगाती है। पद्मावती की शय्या समद्रगृह में बिछायी जाती है। तब महाराज एवं विदूषक स्वयं पद्मावती के समाचार लेने हेतु समुद्रगृह जाते हैं। वहाँ रोग शय्या को रिक्त पाते है। तब वर्णन करते हुए कहते है कि ''निश्चय ही शय्या झुकी हुई नहीं है। चादर पहले के समान है तथा देह परिवर्तन से सिकुड़ी हुई नहीं है। निर्मल (सफेद) तकिया सिरदर्द की औषधियों से मलिन नहीं हुआ है।''[गगअप] उत्तररामचरित में ''सोम पीथी'' शब्द आया है। सोम एक प्रकार की लता है। प्राचीन वैदिक साहित्य में सोम का नाम अत्यधिक आया है। इसके रस के अनेक गुणों का वर्णन सुश्रुत संहिता के चिकित्सा स्थान में किया गया है किन्तु खेद है कि आज इस लता की पहचान किसी को नहीं है। मालतीमाधवम् में योग शिक्षा का वर्णन प्राप्त होता है। योग द्वारा स्वास्थ्य की सभी समस्याओं

का समाधान प्राप्त होता है। योग से कई रोग ठीक किये जा सकते है। पंचमोड्क में आकाशमार्ग से भयंकर और उज्ज्वलवेशवाली कपालकुण्डला प्रवेश करती है। ''जो इडा–पिङ्गला आदि प्रधान षोडश नाड़ियों के मध्य में स्वरूपतः निवास करते हुए उनके ज्ञाताजनों के हृदय में अपने आकार को स्थापित कर उन्हें अणिमादि योग सिद्धियाँ प्रदान करते हैं और अपने उपासको द्वारा स्थिरचित्त से ढुढ़े जाते हैं तथा ज्ञान, इच्छा और क्रिया रूप अथवा ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों से व्याप्त है, ऐसे शक्तिनाथ भगवान् सदाशिव भूत–भविष्य आदि तीनों कालों में लोकोत्तर रूप से निवास करते हैं।'' गगअपप ''प्राचीन काल में जो मेघनाद से वीर लक्ष्मण एवं सुग्रीवादि वानर योद्धा आहत हुए थे वे भी गुणों के कारण महान् औषधि के गन्ध को सुँघकर पुनः जीवित हो गये थे।''गगअपपप

अनिवार्य एवं निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षण– ''मानव मस्तिष्क की शिक्षा शैशव के पालने से ही प्रारम्भ होती है।'' प्रारम्भिक अवस्था में बालक के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण पारिवारिक परिवेश, वातावरण एवं संस्कार होते हैं। परिवार ही बालक की प्रथम पाठशाला हैं और माँ ही उसकी प्रथम शिक्षक। परिवार से प्राप्त संस्कार ही उसको सही दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। बच्चे का खान–पान सन्तुलित हो एवं लालन–पालन उचित रूप में किया गया हो। खाद्य पदार्थों को आपस में बाँटकर खाने की आदत इसी अवस्था में डालनी होगी। शिक्षाप्रद कहानियाँ, गीतों एवं कविताओं के द्वारा उनमें उचित संस्कार डालने होंगे, ताकि बालक आपस में प्रेम एवं सहयोग से रहना सीखे। इस अवस्था में बालक का मन अपरिपक्व होता है, उसमें अभिभावक एवं शिक्षक मिलकर दया, प्रेम एवं सहिष्णुता आदिभावों का समावेश कर सकते हैं। बालक का विकसित मस्तिष्क स्वस्थ्य एवं उत्तम विचार रख सकता है। युवा बालक जो विकास की और उन्मुख होता है, उसके मन में अनेक सपने, आकांक्षाएँ, अपेक्षाएँ एवं बहुत कुछ करने की अदम्य लालसा होती है। नयी–नयी योजनाएँ उसके मस्तिष्क में जन्म लेती है। इस अवस्था में युवा शक्ति को सही दिशा देने की आवश्यकता है। इस अवस्था में वह मानव जीवन से सम्बन्धित मनन चिंतन करने में समर्थ हो जाता है।

प्राचीनकाल में आश्रमों में निःशुल्क शिक्षण कराया जाता था। प्राचीन पाणिनीय शिक्षा, याज्ञवल्क्य शिक्षा, वशिष्ठी शिक्षा, कात्यायनी शिक्षा, पाराशरी शिक्षा, माण्डव्य शिक्षा, माध्यन्दिनी शिक्षा, वर्णरत्न प्रदीयिका, केशवी शिक्षा, नारदीय शिक्षा, माण्डूकी शिक्षा, मल्लशर्मशिक्षा, स्वराङ्करशिक्षा षोडशश्लोकी शिक्षा, अवसान निर्णय शिक्षा, स्वरभक्ति लक्षणशिक्षा, प्रति शाख्यप्रदीपशिक्षा, क्रम सन्धान शिक्षा, गलदृक्शिक्षा, मनःस्वारशिक्षा आदि शिक्षाऐं आश्रमों में निःशुल्क गुरु अपने शिष्यों को प्रदान किया करते थे। इसी तरह निःशुल्क शिक्षा का दृष्टान्त हमें समस्त रूपकों में भी कई स्थानों पर प्राप्त होता है। प्रतिमानाटक में प्रतीहारी घूमकर और देखकर कहती हैं–

''सम्भवक जाओं तुम भी महाराज की आज्ञा से पूज्य पुरोहित जी को यथोचित आदर के साथ शीघ्र बुला लाओ, सारसिका–संगीतालय में जाकर अभिनेताओं को सूचित कर दो कि वे आज सामयिक नाटक

(खेलने) के लिए तैयार हो जाएँ।''[गगपग] सङ्गीत शालाम् नृत्य गीत और वाद्य इन तीनों का समूह सङ्गीत कहलाता है। प्राचीन काल में राजाओं के यहाँ संगीतशाला या नाट्यशाला होती थी जिसमें नाटक आदि की शिक्षा दी जाती थी। उत्तररामचरित में विविध विद्याओं का वर्णन प्राप्त होता है। जिसमें चुडाकर्म क्षत्रियोचित कर्म से उपनयन संस्कार करके वेद पढ़ाया जाता है। ''इतर तीन विद्याएँ मानी गयी हैं आन्वीक्षिकी (न्याय अथवा आत्मविद्या) वार्ता– (कृषि, व्यापार इत्यादि) तथा दण्डनीति (राजनीतिशास्त्र)''[गगग] इन समस्त विद्याओं का अध्ययन अध्यापन निःशुल्क करवाया जाता था। महर्षि वाल्मीकि ने स्वयं लव–कुश आदि को ग्यारह वर्ष में क्षत्रियोचित विधि से उपनयन–संस्कार करके उन्हें वेद पढ़ाया। आत्रेयी के कथनानुसार गुरु के समक्ष सभी शिष्य समान रूप से होते हैं। वे प्रत्येक शिष्य को समान भाव से ज्ञान देते हैं गुरु के दृष्टिकोण में प्रतिभा सम्पन्न एवं मन्दबुद्धि छात्र समान होते हैं।'' भगवान् वाल्मिकी ने समानरूप से ज्ञान प्रदान किया–''गुरु जिस प्रकार प्रतिभा सम्पन्न छात्र को, उसी प्रकार मन्दबुद्धि छात्र को भी विद्या प्रदान करता है। उन दोनों के ज्ञान में न तो शक्ति–संचार ही करता है और न तो शक्ति को विनष्ट ही करता है, तथापि फल के प्रतिमहान् अन्तर होता हैं।''[गगगप] भगवान् श्रीराम लक्ष्मण आदि को भी उनके गुरु विश्वामित्र जी से शिःशुल्क शिक्षा प्राप्त हुई थी। ''देवों के पराक्रमसार के द्वारा जिसको ब्रह्मा ने बनाया उस शैवधनुष का भङ्ग राम ने किया। कृशाश्वशिष्य विश्वामित्र से विजय प्रद अस्त्रविद्या की शिक्षा भी तो राम को मिल चुकी थी।''[गगगपप] जामदग्न्य ने धर्म अध्यात्म तथा धनुर्वेद की शिक्षा शिवजी से पाई थी उन्होंने कहाँ कि ''हमने शिक्षा शिवजी से पाई है, जब हमने सभी क्षत्रियों का नाश ही कर दिया तो क्षत्रिय हमारा क्या शासन करेंगे। सम्बन्ध तथा वार्धक्य के कारण वसिष्ठ हमारे आराध्य है, परन्तु प्रतिस्पर्द्धा में हमारी समानता या तुलना वह नहीं कर सकते।[गगगपपप] आश्रमों में विशिष्ठ व्यक्ति के आगमन पर अनध्याय होता था अर्थात् उस समय कोई अध्ययन अध्यापन नहीं करवाया जाता था। राजा जनक ब्रह्मचारियों का कोलाहल सुनकर कहते है कि आज निश्चय ही शिष्टजनों के आ जाने से आश्रम में अनध्याय है। बचपन वास्तव में सुलभ सुखवाला होता है। लव–कुश दोनों स्वच्छन्द रूप से खेल रहे हैं। मालतीमाधव में न्याय विद्या का वर्णन प्राप्त होता है।

मालतीमाधव में कामन्दकी अवलोकिता को कहती हैं कि– ''भूरिवसु और देवरात की ऐसी प्रतिज्ञा हुई कि हम दोनों को अवश्य ही अपत्य सम्बन्ध करना चाहिए। इसलिए विदर्भराज के मन्त्री देवरात ने अपने पुत्र माधव को न्यायविद्या के श्रवण के लिए कुण्डिनपुर से पद्मावती नामक पुर में जो भेज दिया''[गगगपअ] उर्वशी ने अपने पुत्र को धरोहर के रूप में तापसी के पास रखा था तापसी ने उस आयुष कुमार को सभी विधाएँ पढ़ा ली। और उसे धनुर्वेद भी सीखा लिया। विक्रमार्वशीयं में राजा इस बात से खुश है कि आज समस्त विद्याओं से युक्त आयुष कुमार को प्राप्त कर आज निश्चय ही मैं सनाथ (धन्य) हो गया हूँ। तापसी आयुष कुमार की प्रशंसा करती हुई कहती है कि– ''इस कुमार ने विद्याओं को सीख (पढ़) लिया है। इस समय (अब) कवच धारण करने योग्य (जवान) हो गया है। यह तुम्हारी धरोहर तुम्हारे पति के सामने लोटा दिया है तो मैं (अब) बिदाई (जाना) चाहती हूँ।''[गगगअ]

साहित्यिक एवं सांस्कृतिक शिक्षण– भारत जैसे विशाल देश में जिसका आकार किसी महाद्वीप से कम नहीं है, जीवन का हर पहलू किसी न किसी रूपमें मानव अधिकारों से जुड़ा है। अनेक मानव अधिकार ऐसी सदियों पुरानी परम्पराओं से उत्पन्न हुए हैं, जो आज भी हमारे अवचेतन मस्तिष्क में विद्यमान है। भारतीय संस्कृति सदैव से ही मानव अधिकारों की पोषक रही है। जिसके विभिन्न प्रमाण हमें वेद, पुराण, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों में मिलते हैं। ऋग्वेद का यह श्लोक मानव अधिकारों की रक्षा एवं शांति का संदेश देता है–**''अध्वर्य जिवातु भेषज्म सम्नों अस्ति द्विपते। सम चतुष्पदे ! ओम शांति, शांति, शांति''।।** मानव अधिकारों का विचार दार्शनिक, राजनीतिक, व सामाजिक विचारधाराओं से जुड़ा है। मानव अधिकार के प्रति सचेतना जाग्रत करने का मुख्य स्त्रोत शिक्षा ही हो सकती है। शिक्षा मानव की बुनियादी आवश्यकताओं में से एक है। यदि शिक्षा को मानव अधिकार से जुड़े मुद्दों जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ के साथ जोड़ दिया जाये तब ही मानव अधिकारों का संरक्षण सम्भव है।

सुमित्रानन्दन पंत के अनुसार– **''सत्यं, शिवं, एवं सुन्दरम् जैसे मूल्यों का जग जीवन में तादात्म्य करने की आज महत्ती आवश्यकता है।''** साहित्यिक एवं सांस्कृतिक शिक्षा रूपकों में भी अनेक स्थानों पर दी गई है। महर्षि कण्व स्वयं अपनी पालित पुत्री शकुन्तला को पतिगृह गमन के समय भारतीय संस्कृति के अनुरूप शिक्षा–दीक्षा देकर विदा करते हैं। उन्होंने जो उपदेश शकुन्तला को दिया वह सर्वथा ग्राह्य एवं हितकर है। यह सामान्य कन्या से लेकर राजकुमारी तक प्रत्येक कन्या के लिये समान महत्त्व रखता है।

शार्ंगरव एवं शारद्वत दोनों ही शिष्य शास्त्र एवं लौकिक ज्ञान से युक्त है। शिक्षा के कारण दोनों ही शिष्यों में लौकिक व्यावहारिक ज्ञान भी दृष्टिगत होता है।

भारतीय संस्कृति के अनुरूप कण्व द्वारा शकुन्तला को उपदेश दिया गया है– ''हे पुत्री ! बड़ों की सेवा करना, सपत्नी जनों के साथ प्रिय सखी सा व्यवहार करना, पति के विपरीत आचरणन करना, नौकरों के प्रति उदार रहना तथा अपने ऐश्वर्य पर इठलाना मत–ऐसा व्यवहार करने वाली युवतियाँ गृहिणी पद को प्राप्त होती है तथा इसके विपरीत आचरण करने वाली युवतियाँ कुल के लिये व्याधि स्वरूप होती है।''गगगअप विक्रमार्वशीयम् मे ंउर्वशी ने अपने सुकुमार को तापसी के पास धरोहर के रूप में रख दिया लेकिन तापसी ने अपने कर्त्तव्य का पालन कर उसे सुशिक्षित किया आयुष कुमार ने सभी विद्यायें पढ़ ली, और धनुर्वेद भी सीख लिया। राजा को आयुष कुमार से मिलने पर अत्यन्त आनन्द का अनुभव होता है। भारतीय संस्कृति में माता–पिता एवं गुरु का सम्मान करना गौरव माना जाता है। आयुष कुमार स्वयं अपने पिता राजा से मिलकर उनके समीप जाकर पैर छुकर आशीर्वाद लेता है। तत्पश्चात् वह ब्राह्मण विदूषक से आशीर्वाद लेता है। उर्वशी कहती है कि– ''(मुख उठाये हुये आयुष्य कुमार का आलिङ्गन करके) हे बेटे ! पिता की सेवा करने वाले हो''गगगअपप तथा विक्रमोर्वशीय में जनक के समक्ष जामदग्न्य वार्तालाप करते हुए उनकी सांस्कृतिक शिक्षा वेदान्त शिक्षा का वर्णन करता है। कहता है कि– ''आप ब्रह्ममनिष्ठ वयोबद्ध धर्मपरायण है, याज्ञवल्क्य ने आप

को वेदान्त में शिक्षा दी है, इसलिये सभ्यता के कारण से मैंने आपके साथ नम्रता का व्यवहार किया है, फिर आप क्यों मोहवश भय भूल कर कठोर बाते कर रहे है।''[गगगअपपप]

साहित्यिक शिक्षण के उदाहरण में हम उत्तररामचरित के सप्तमोङ्क को ले सकते है। जिस अंक का नाम ही कवि ने ''सम्मेलन रखा है। जो वास्तव में अन्वर्थ ही है। इस अंक में बारह वर्ष बाद राम और सीता का सम्मिलन होता है। इसके अतिरिक्त कुश–लव, कौशल्यादि रानियों, वसिष्ठ, अरुन्धती, ऋष्यशृङ्ग, शान्ता, शत्रुघ्न राजर्षि जनक आदि का भी समागम होता है। अंक में प्रारम्भ में ब्राह्मण, क्षत्रिय, नगरवासी, जनपदवासी, सभी प्रजा को बुलाया जाता है। राम, लक्ष्मण, लव–कुश आदि को ससम्मान आसन दिये जाते है। ''राज्याश्रम में निवास करने पर भी अहंकार रहित मुनियों के क्लेशकर नियमों को स्वीकार कर लेने वाले वाल्मीकि का प्रवेश होता है।''[गगगपग] इस प्रकार के सम्मेलन के आयोजन से ज्ञात होता है कि तत्कालिन समाज में साहित्यिक–सांस्कृतिक शिक्षण का अभाव नहीं था। महावीरचरितम् में वेदों की रक्षा एवं प्रजा की कुशलता की कामना की गई है। भरत राजा दशरथ समक्ष जाकर कहता है कि– ''वेदों के रक्षक आपके पुत्र राम के राजा होने से समस्त लोक प्रसन्न तथा पूर्णकाम होने की इच्छा रखते हैं'',[गस] तब दशरथ प्रत्युत्तर देते हुए कहते है कि– सखे जनक जी कल्याण कामना करने वाली प्रजा से अच्छी बात कही गई है। किन्तु राम स्नेही वशिष्ठ तथा विश्वामित्र यहाँ नहीं है। आज कई प्रकार की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। उसी प्रकार पुराने जमाने में उड़ने की प्रतियोगिता में ''सूर्य छुने की बाजी लगी, इसी प्रसङ्ग में सूर्य जब अतिसमीप आ गये तो हमारी देह जलने लगी, इस दशा में इन्होंने अपने पंखों में छिपाकर जलने से अविकल भाव में बचानें की दया की थी।''[गसप] इस प्रकार प्रतियोगिता का वर्णन महावीरचरितम् में प्राप्त होता है। किसी शुभ प्रसङ्ग पर आज भी वाद्य यन्त्रों को बजाया जाता है। उसी प्रकार सीता की शुद्धि परीक्षा के समय वसु, सूर्य, रूद्र युक्त साक्षात् इन्द्र साध्वी सीता का अभिनन्दन करते है। जो आग में पैठकर शुद्धता का परिचय दे चुकी है। लोकमर्यादा का पालन किया, उसी समय मङ्गल वाद्ययुक्त गीतों को गाया गया।

मालतीमाधवम् में नट का कथन ''ऐसे आपने इस नाटक की भूमिका के लिए सभी नटों को वर्ण, वेष, भाषा, अभिनय आदि सारी नाटक की शिक्षा दे दी है। बौद्ध संन्यासियों कामन्दकी की प्रथम भूमिका का तो स्वयं आप विद्वान् ही अभ्यास कर रहे है और मैं उनकी शिष्या अवलोकिता के वेशभूषा–भाषा आदि का अभ्यास कर रहा हूँ।''[गसपप] नागानन्दम् नाटक में प्रारम्भ में साहित्यिक सांस्कृतिक शिक्षण की झलक दिखाई पड़ती है। प्रारम्भ प्रथम अङ्क के प्रारम्भ में विद्याधरराज जीमूतकेतु वृद्ध होने के कारण सम्पूर्ण राज्य भार अपने सुयोग्य पुत्र जीमूतवाहन को सौंपकर सपत्नीक वानप्रस्थ व्यतीत करने वन की और प्रस्थान करते है। नायक और विदूषक एक तपोवन में प्रवेश करते है। वहाँ उन्हें ब्रह्मचारियों द्वारा परित्यक्त मूँज की टूटी करधनिया दीखती है। प्रतिदिन सुनते रहने के कारण तोते भी वेदमन्त्रों का पाठ कर रहे है। ऐसा प्रतीत

होता है। ''अध्ययनरत ब्रह्मचारी लोग गीली–गीली समिधाओं को तोड़ रहे हैं। मुनि कन्याएँ पौधे की क्यारियों में पानी पटा रही है।''गसपपप

''ये पेड भौरों के गुंजार से मानो मधुर स्वागत कर रहे है, फल–भार से झुके शाखारूपी सिरो से मानो प्रणाम कर रहे है और फूलों की वर्षा करते हुए मानों मुझे पूजा का उपहार सौंप रहे है लगता है तपोवन के पेड़ों को भी अतिथि सत्कार की शिक्षा दी गई है।''गसपअ मृच्छकटिकम् के रचयिता कवि शुद्रक स्वयं ''ऋग्वेद, समावेद, गणितशास्त्र, (अङ्कविद्या एवं ज्योतिष शास्त्र) चौसठ कलाओं, नाट्यशास्त्र और हस्ति संचालन की शिक्षा को प्राप्त करके भगवान् शङ्कर की कृपा से (अज्ञानरूपी) अन्धकार से रहित नेत्रों को (ज्ञान नेत्रों को) प्राप्त करके और अपने पुत्र को राजा देखकर अर्थात् अपने पुत्र को अपने राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित करके अत्यन्त उत्थान कराने वाले अश्वमेघनामक यज्ञ को सम्पन्न करके और एक सौ वर्ष तथा दश दिनों की आयु प्राप्त करके अग्नि में प्रविष्ठ हो गये। (अथवा अग्निहोत्रानुष्ठान में लग गये)''गसअ

शान्ति हेतु शिक्षण– आज मनुष्य दूसरों को प्रेम और सहानुभूति देने के बजाय, कष्ट देने में गर्व अनुभव करता है। दूसरों के अधिकार छीनना एवं उन पर अत्याचार करना एक साधारण–सी बात हो गयी है। इस वातावरण में मानव अधिकार संरक्षण मानव के विकास एवं शांतिपूर्ण जीवन यापन के लिये अत्यावश्यक हो गया है।

आज विश्व के समक्ष, मानव अधिकार एवं समस्या के रूप में उपस्थित है। मानव अपने अधिकारों के लिये उचित या अनुचित रूप से एक दूसरे से जूझ रहे है। आधुनिक समय में पाश्चात्य देशों की भोग विलासित के कारण मानवता अपने पतन की ओर अग्रसर हो रही है। इसी कारण मानव सभ्यता अपने विकास के चरम बिन्दु पर पहुँचकर भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे– स्वच्छ जल, स्वच्छवायु तथा स्वच्छ आवास के लिये संघर्ष कर रही है। आज दुनिया की आधी से अधिक आबादी भूख, गरीबी, बेरोजगारी, अत्याचार, अनाचार के साथ–साथ आतंकवाद से जूझ रही है।

विश्व शांति स्थापित हो, सद्भाव एवं प्रेम का वातावरण सर्वत्र दृष्टिगोचर हो इसलिये 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानव अधिकारों की घोषणा की गयी थी। आज नैतिक पतन की गति तीव्र है। आज मानव समाज का तेजी से नैतिक पतन हो रहा है, नाबालिग बालिकाओं के साथ बलात्कार एवं उनकी हत्या, दहेज के लिये बहू को प्रताड़ित करना यहाँ तक कि उसके प्राण तक ले लेना आज सामान्य सी बात हो गयी है। पैसे के लिये चोरी, अपहरण, हत्या, मानव अधिकार का हनन है। आज आतंकवाद का कहर समस्त विश्व में व्याप्त है। आतंकवाद के मूल कारणों में असहनीय शोषण, असामान्य भेदभाव, नस्ल की श्रेष्ठता की अवधारणा गरीबी तथा अज्ञानता एवं धर्मांधता है। विश्व में आज आपसी समझ के साथ विकास की आवश्यकता है ताकि दूसरे के प्रति उत्तरदायित्त्व निभा सके।

प्राचीन भारत में सद्विवेक जाग्रत करके उसे सदाचरण के लिए प्रेरित करना और धार्मिक परिवेश में उसके व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास करना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य था। व्यक्ति के चरित्र का निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन, जीविकोपार्जन की क्षमता तथा भारतीय संस्कृति का प्रचार और प्रसार जैसे व्यापक उद्देश्य प्राचीन शिक्षा को गरिमामण्डित करते थे। किन्तु आज की शिक्षा पद्धति में ऐसा कोई प्रावधान नहीं पाते जिसमें विद्यार्थियों को नैतिक, सामाजिक, एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा दी जा सके। आज विद्यार्थियों को एवं समाज के विभिन्न वर्गों में मानव अधिकार शिक्षा का प्रसार एवं प्रचार अत्यावश्यक है। आज मानव में शांति का अभाव है। उसका मुख्य कारण व्यक्ति की महत्त्वाकांक्षा है महत्त्वाकांक्षा ही व्यक्ति को सभी तरह से व्यथीत करती है। लक्ष्मी एवं सरस्वती परस्पर विरोधी है। सरस्वती उपासक विद्वान के पास लक्ष्मी का अभाव रहेगा तो लक्ष्मी उपासक के पास विद्या या बुद्धि का अभाव रहेगा। इसी बात को स्पष्ट करते हुए विक्रमोर्वशीयम् में भरत वाक्य द्वारा बताया गया है कि ''परस्पर विरोध रखने वाली लक्ष्मी और सरस्वती का एक स्थान पर रहना बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है। परन्तु लक्ष्मी और सरस्वती यह एक साथ रहना सर्वदा सज्जनों के लिये कल्याणकारी एवं सम्पन्नता देने वाला हो''[गसअप] अन्त में मंगल कामना हेतु कहा है कि ''सभी लोग विषमताओं को पार करें, सभी लोग कल्याणों को प्राप्त करें, सभी लोग मनोरथों को प्राप्त करें, सभी सब जगह प्रसन्न होवें।''[गसअपप]

समस्त जीवों एवं मानवों के कल्याण की भावना रखने से ही विश्व में शान्ति की स्थापना हो सकेगी कर्णभारम् में कर्ण स्वयं शल्यराज के कष्ट पूर्ण बात को सुनकर प्रत्युत्तर देते है कि ''गौ ब्राह्मणों का कल्याण हो। सभी स्त्रीयों का कल्याण हो। रण में पीठ न दिखाने वाले वीर योद्धायों का कल्याण हो। मुझ सुअवसर प्राप्त किये हुये का भी कल्याण हो। अब मैं प्रसन्न हूँ।''[गसअपपप] दुतघटोत्कच में धृतराष्ट्र विश्व शान्ति का कथन करते हुए कहते है कि ''अभिमन्यु के वध से अत्यन्त क्रुद्ध और कुपित कृष्ण के द्वारा गृहीत वल्गा (लगाम) और चाबुक से युक्त अर्जुन अपने कठिन धनुष (गाण्डीव) की सहायता से सारे संसार को नष्ट कर डालेंगे। तत्पश्चात् प्रकृति अवस्था में विश्व शांति को प्राप्त होगा।''[गसपग] कर्णभारम् में भरत वाक्य द्वारा विश्व शान्ति की शिक्षा प्रदान की गई है। ''सब संसार भर में सम्पत्तियाँ हो, विपत्तियों का सर्वथा नाश हो और हम लोगों की पृथ्वी पर कोई योग्य राजा, राजाओं के गुणों से युक्त हो शासन करें।''[स] राजा यदि गुणी होगा तो प्रजा भी उसके गुणों से प्रभावित होकर सुख एवं शान्ति का अनुभव करेगी। सभी सम्पत्तियाँ प्राप्त होने पर ही राज्य का संचालन अच्छे तरीके से हो सकेगा जिस राज्य में सम्पत्तियों की कमी नहीं होती वहाँ सुख का अभाव नहीं होगा तथा विपत्तियों का तो सवाल ही नहीं उठता। अभिज्ञानशाकुन्तल में महर्षि कण्व पुत्री शकुन्तला को पतिगृह गमन के समय अनुकूल व्यवहार हेतु शिक्षा प्रदान कर गृहस्थाश्रम को शान्तिपूर्वक पूर्ण करने का सन्देश देकर हार्दिक शान्ति का अनुभव प्राप्त करते है।

प्राचीन समय में व्यक्ति अपनी अध्यात्म शक्ति की उपासना हेतु आश्रम में जाना पसन्द करता था। वहाँ रहकर वह शान्ति का अनुभव करता था। स्वप्नवासवदत्तम् में मन्त्री यौगन्धरायण आश्रम विरूद्ध आचरण

देखकर अशान्ति युक्त वातावरण बनाने वाले राजकीय व्यक्तियों को कहता है कि ''धैर्ययुक्त, आश्रम में रहने वाले, वन के फलों से सन्तुष्ट रहने वाले, सम्मान के योग्य तथा वल्कल वस्त्र धारण करने वाले लोगों को भी भयभीत किया जा रहा है। अरे ! उदण्ड विनय से रहित तथा चंचल ऐश्वर्यों से अति गर्वित यह कौन व्यक्ति (राजा) है जो शान्त इस तपोवन को अपनी आज्ञा से गाँव के समान (अशान्ति) युक्त बना रहा है।''[सप] महावीरचरितम् में राजा को सूत शान्ति सम्बन्धित तर्क द्वारा समझाता है कि– ''देवों में श्रेष्ठ ब्रह्मा आदि जिनकी शान्ति के लिये प्रार्थना कर चुके है जो तपस्याजन्य तेज के निधान तथा स्वयं प्रतिभात ब्रह्मा है, जिनके पास विद्या रहा करती है उस विश्वामित्र मुनि के साथ अपने भाईचारा का सम्बन्ध स्थापित कर लिया है अतः आप गृहस्थ में शलाघ्य गृहमेधी हैं।''[सपप] साधुओं के संसर्ग से अज्ञान दूर होता है। ''शाश्वत शान्ति मिलती है। एक बार बात भी कर लेने से इहलोक तथा परलोक में कल्याण होता है। साहचर्य होने से तो इहलोक तथा परलोक में कल्याण होता है। साहचर्य होने से तो बड़ा महत्त्व प्राप्त होता है, ये महात्मा यदि प्रसन्न होकर कुछकह दें तो वह अनन्त फलद होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि महात्माओं की बुद्धि विशलता से हमें शान्ति का अनुभव होता है।

महावीरचरितम् में वशिष्ठ विश्वामित्र संवाद में बुढे राजा दशरथ द्वारा पुत्रप्रेम पराधीन होकर शान्ति की याचना की गई है। वशिष्ठ जीवन के सुमार्ग को अपनाने हेतु प्रेरित करते है। वे कहते है कि निर्मल बनाने वाली मैत्री आदि भावना का अवलम्बन करो, ''ऋषियों की मण्डली में वीर युधाजित् तथा मन्त्रियों के साथ वृद्ध राजा रोमपाद बैठे हुए है, सतत् यज्ञपरायण, पुराने ब्रह्माज्ञानी जनक जनपद के स्वामी सभी दोंह रहित है और सभी शान्ति की प्रार्थना करते हैं।''[सपपप] उत्तररामचरित में ''विद्या'' शब्द आया है। 'विद्या का अर्थ ब्रह्म विद्या अथवा आत्मज्ञान है। आत्मज्ञान या ब्रह्विद्या के द्वारा व्यक्ति आत्मीक शान्ति का अनुभव करता है। वेदान्तियों का एक प्रिय सिद्धान्त हैं, जिसके अनुसार ''यह संसार मिथ्या हैं और ब्रह्मा ही वास्तविक है। जैसे की साँप रस्सी का विवर्त है, उसी प्रकार यह संसार ब्रह्मा का विवर्त हैं। यह माया या भ्रान्ति आत्मज्ञान अथवा विद्या से ही दूर होती है।''[सपअ] राजा दुष्यन्त अभिज्ञानशाकुन्तल में ऋषि मारीच के आश्रय में पहुँचकर शान्ति का अनुभव करते है। तपोवन का वातावरण शान्त होता है। मानो वह मन के विकार को हर लेता है। ''अहो ! स्वर्ग से भी बढ़कर यह शान्ति प्रद स्थान है। यहाँ पहुँचकर मैं मानो अमृत सरोवर में डुबकी लगा रहा हूँ।''[सअ] मालविकाग्निमित्रम् में निर्वाण शब्द आया है। ''बौद्धसिद्धान्तानुसार निर्वाण मुक्ति को कहते है। जो परम शान्ति अथवा परम आनन्द की अवस्था होती है। मालविका जब हृदय के अन्दर विद्यमान है तो वह उसके लिए परमानन्द है ही। कालिदास ने भी शाकुन्तल में लिखा है– ''अहो ! लब्धं नेत्र निर्वाणम्।'' राजा अग्निमित्र ने आत्म अवलोकन कर उपर्युक्त शब्द निर्वाण कहा है।''[सअप] वस्तुतः सभी नाटकों के अन्तिम भरत वाक्य में शान्ति की कामना की गई है। मृच्छकठिकम् में भरत वाक्य में कहा गया है कि– ''गाये खूब दूध देने वाली हो। पृथिवी (सर्वविध) धान्यो से परिपूर्ण हो। मेघ समय पर वर्षा करने वाला हो। हवायें सभी के मन को आनन्द देने वाली होती हुई बहें। जन्म लेने वाले सभी प्राणी सदैव आनन्द प्राप्त करें, सुखी रहे।

ब्राह्मणलोग सबके प्रिय बने। सदाचारी लोग, धनवान बने। राजा लोग शत्रुओं का शमन करने वाले और धर्मपरायण होत हुये पृथिवी का पालन करें।''सअपप

शोधात्मक निष्कर्ष– शिक्षा का उद्देश्य मानव ज्ञान की वृद्धि करना मात्र ही नहीं अपितु मनुष्य के मस्तिष्क में श्रेष्ठ विचारों को विकसित करना हैं। शिक्षा का उद्देश्य बच्चें के व्यक्तित्व, प्रतिभा, मानसिक एवं शारीरिक क्षमताओं को पूरी तरह विकसित करना है। शिक्षा बच्चें को बड़े होने पर समाज में सक्रिय जीवन जीने के लिये तैयार करती है। इसके साथ ही बच्चें के मन में अपने माता–पिता, अपनी भाषा एवं संस्कृति का सम्मान करना सिखलाती है। बालक दूसरों की संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों का भी सम्मान करना सीखता है। संस्कृत के प्रमुख नाटकों में उस समय शिक्षा का अधिकार सुरक्षित एवं संरक्षित था। शिक्षा व्यवस्था सुदृढ़ एवं परिपक्व अवस्था में थी। संस्कारिक शिक्षा की और ज्यादा ध्यान दिया जाता था। उस काल में गुरुकुल व्यवस्था थी कुलपति के सानिध्य में विद्या अध्ययन–अध्यापन होता था। शिक्षा का प्रधान उद्धेश्य शरीर के संस्कार को विकसित–पुष्पित–पल्लवित करना था और आत्मा को आनन्दित करना ही था। आज की शिक्षा व्यवस्था खर्चीली एवं रोजगार विमुख सी दिख पड़ती हैं। आज की शिक्षा ने हमारी जरूरतों को ही बढाया हैं सन्तुष्टि को नहीं। आज डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, प्रोफेसर, अध्यापक, जज एवं साइंटिस्ट जैसे पदों की शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी हम खुश नहीं हैं कारण संस्कारिक शिक्षा का अभाव। अब तो ज्यादा अपराध भी शिक्षित लोग ही करते हैं। शिक्षा जगत में आज मन के विकास की बात न कर मान के विकास की बात करते है इसीलिए व्यवस्था बिगड़ी हुई है।

***

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

i श्रीमद्भगवद्गीता – 4/38

ii चित्रलेखा – सखि ! विस्रब्धा भव। ननु भगवता देवगुरुणा अपराजितां नाम
शिखाबन्धिनीं विद्यामुपदिशता त्रिदश प्रति पक्षस्यालङ्घनीयेकृतेः स्व।। विक्रमोर्वशीयम्, 2/9 का (गद्य)

iii अयं स कालः क्रमलब्धशोभनो, गुणप्रकर्षो दिवसोऽयमागतः।
निरर्थमस्त्रं च मया हि शिक्षितं, पुनश्च मातुर्ववचनेन वारितः।। कर्णभारम्, 1/8

iv वैखानस – राजन् ! समिदाहरणाय प्रस्थितावयम्। अभिज्ञानशाकुन्तल, 1/12 का (गद्य)

v राजा – अये! एतास्तपस्वि– एवाभिवर्त्तन्ते। वही, 1/17 का (गद्य)

vi शक्रापनीतकवचोऽर्धरथः प्रमादी, व्याजोपलब्धविफलास्त्रबलो घृणावान्।
कर्णोऽर्जुनस्य किल यास्यति तुल्यभावं यद्यस्त्रदानगुरवो दहनेन्द्ररूद्राः।। दूतघटोत्कच, 1/23

vii रावण – (आत्मगतम्) यावद्हमपि– श्राद्धकल्पंच। प्रतिमानाटकम् 5/8 का (गद्य)

viii ब्रह्मचारी– भोः। श्रूयताम ! – वानस्मि। स्वप्नवासवदत्तम्, 1/12 का (गद्य)

ix गुणानां वा विशालानां सत्काराणां च नित्यशः।
कर्त्तारः सुलभा लोके विज्ञातारस्तु दुर्लभाः।। स्वप्नवासवदत्तम्, 5/10

x महासेनस्य दुहिता शिष्या देवी च मे प्रिया।
कथं सा न मया शक्या स्मर्तुं देहान्तरेधपि।। वही, 6/11

xi त्रातुं लोकानिव परिणतः कायवानस्त्रवेदः
क्षात्रो धर्मः श्रित इव तनुं ब्रह्मकोषस्यगुप्त्यै।
सामर्थ्यानाभिव समुदयः संचयो वा गुणाना,
माविर्भूय स्थित इव जगत्पुण्यनिर्माणराशिः।। उत्तररामचरितम्, 6/9

xii शुश्रूषस्व गुरुन् कुरू प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्त्तुर्विपकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणी पदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।। अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4/20

xiii विदूषक – जाने तत्रभवती हंसवती वर्णपरिचयं करोतीति। वही, 5/7 का (गद्य)

xiv प्रथमा–कतिचिदिवसानि – अर्पयितुम्। वही, 6/3 का (गद्य)

xv कुमुदिनी सखि ईदृशेन – कथं भर्त्रा दृष्टा। मालविकाग्निमित्रम्, 1/3 का (ग?)

xvi छेदो दंशस्य दाहो वा क्षतेर्वा रक्तमोक्षणम्।
एतानि दष्ट मात्राणामायुष्याः प्रतिपत्तयः।। वही, 4/4

xvii जीमूतस्तनितविशङ्भिर्मयूरै रुद् ग्रीवरनुरसितस्य पुष्करस्य।
निर्ह्रादिन्युपहितमध्यमस्वरोत्था मायूरी मदयति मार्जना मनांसि।। वही, 2/21

xviii कदा मुखं वरतनु कारणाद्दते तवागतं क्षणमपि कोपपात्रताम्।
अपर्वणि ग्रहकलुषेन्दुमण्डला विभावरी कथय कथं भविष्यति।। वही, 4/16

xix लब्धास्पदोऽस्मीति विवाद भीरोस्तितिक्षमाणस्य परेण निन्दाम्।
यस्यागमः केवल जीविकायै तं ज्ञानंपण्यं वणिजं वदन्ति।। मालविकाग्निमित्रम्, 1/17

xx उपदेशं विदुः शुद्धं सन्तस्तमुपदेशिनः।
श्यामायते न युष्मासु यः कांचनविभाग्निषु।। वही, 2/9

xxi विदूषक – भवति। त्वरयस्वास्य– भवतु। विक्रमोर्वशीयम्, 2/19 का (गद्य)

xxii नटी। अद्य मया– प्रेषयितुम्। प्रतिज्ञायौगन्धरायण, 1/1 का (गद्य)

xxiii कुरङ्गी मम् निर्वेद – आसितम्। अविमारकम्, पृ. सं. 122, पंचमोङ्ग। प्रथम (गद्य)

xxiv रोगादकालागुरुचन्दनार्द्रा
विमुक्तभूषागत हावभावा।
विभातिनिर्व्याजमनोहराङ्गी
वेदश्रुतिर्हेतुविवर्जितेव।। वही, 5/1

xxv जयतु भर्तुदारिका – लिम्प किल। अविमारक, 5/2 का (गद्य)

xxvi शय्या नावनता तथास्तृतसमा न व्याकुलप्रच्छदा,
न क्लिष्टं हि शिरोपधानममलं शीर्षाभिधातौषधैः
रोगे दृष्टिविलोभनं जनयितुं शोभा न काचित् कृता,
प्राणी प्राप्य रूजा पुनर्न शयनं शीघ्रं स्वयं मुंचति।। स्वप्नवासवदत्तम्, 5/4

xxvii षडधिकदशनाडीचक्रमध्यस्थितात्मा
हृदि विनिहितरूपः सिद्धिदस्तद्विदां यः।

अविचलितमनोभिः साधकैर्मृग्यमाणः
स जयति परिणद्धः शक्तिभिः शक्तिनाथः।। मालतीमाधवम्, 5/1

xxviii कण्ठे श्रीपुरुषोत्तमस्य समरे दृष्ट्वा मणि शत्रुभि–
र्नष्टं मन्त्रबलाद्वसन्ति वसुधामूले भुजङ्गा हताः।
पूर्वं लक्ष्मणवीरवानरभटा ये मेघनादाहताः
पीत्वा तेऽपि महौषधेर्गुणनिधेर्गन्धं पुनर्जीविताः।। रत्नावली, 2/5

xxix प्रतिहारी – (परिक्रम्यावलोक्य च) आर्य – सज्जा भवतेति। प्रतिमानाटकम्, 1/4 का (गद्य)

xxx ''इतराः तिस्त्रः विद्याः'' – उत्तररामचरितम्, 2/3 का (गद्य)

xxxi वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जड़े,
न तु खलु तयोर्ज्ञाने शक्तिं करोत्यपहन्ति वा।
भवति हि पुनर्भूयान् भेदः फलं प्रति तद्यथा,
प्रभवति शुचिबिम्बग्राहे मर्णिर्न मृदादयः।। उत्तररामचरितम्, 2/4

xxxii वीर्योत्कर्षैर्यदमृतभुजांनिर्ममे पद्मयोनि–
स्तस्यद्वैधं व्यधित धनुषः शांभवीयस्य रामः।
दिव्यामस्त्रोपनिषदमृषेर्यः कृशाश्वस्य शिष्या–
द्विश्वामित्राद्विजयजननीमप्रमेयः प्रेपेद।। महावीरचरितम्, 2/2

xxxiii धर्मे ब्रह्मणि कार्मुके च भगवानीशो हि मे शासित
सर्वक्षत्त्रनिबर्हणस्य विनयं कुर्युः कथं क्षत्रियाः।
संबन्धस्तु वसिष्ठमिश्रविषये मान्यो जरायां न तु
स्पर्धायामधिकः समश्च तपसा ज्ञानेन चान्योऽस्ति कः।। वही, 3/37

xxxiv यदैव नो विधा परिग्रहाय– सुविहितम्।। मालतीमाधवम्, 1/13 का (गद्य)

xxxv तापसी–एष गृहीतविघ–ममाश्रमधर्मः।। विक्रर्मोर्वशीयम्, 5/12 का (गद्य)

xxxvi ''शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखी वृत्ति सपत्निजने।।'' अभिज्ञानशाकून्तलम्, 4/20

xxxvii उर्वशी'–चिरस्य आर्या– अवितृष्णाऽस्मि। विक्रमोर्वशीयम्, 5/12 का (गद्य)

xxxviii जनक–जामदग्न्य संवाद– वही, पृ. सं. 264 (गद्य)

xxxix राज्याश्रमनिवासेऽपि प्राप्तकष्टमुनिव्रतः।
वाल्मीकिगौरवादार्य इत एवाभिवर्तते।। उत्तररामचरित, 7/1

xl त्रय्यास्त्राता यस्तवायं तनूजस्तेनाद्यैवस्वामिनस्ते प्रसादात्।
राजन्वन्तो रामभद्रेण राज्ञा लोकाः सर्वे पूर्णकामाश्च सन्तु।। महावीरचरितम्, 4/44

xli पुराकल्पे दूरोत्पतनखुरलीकेलिजनिता–
दति प्रत्यासङ्गात्परितपति गात्राणि तपने।
अवष्टभ्यासौ मामुपरि ततपक्षः शिशुरिति
स्वपक्षाभ्यां प्लोषादविकलमरक्षत्करुणया।। वही, 5/5

xlii नट–तावद्भमिकास्तथैव – लोकितायाः।। मालतीमाधव, 1/10 का (गद्य)

xliii न खलु मुदित – तपोवनस्य। नागानन्दनम्, 1/11 का (गद्य)

xliv मधुरमिव वदन्ति स्वागतं भृङ्ग शब्दै
र्नतिमिव फलनम्रैः कुर्वतेऽमी शिरोभिः।

मम ददत इवार्घ्यं पुष्पवृष्टीः किरन्तः।
कथमतिथिसपर्य्यां शिक्षिताः शाखिनोऽपि।। वही, 1/12

xlv ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकी हस्तिशिक्षां
ज्ञात्वा शर्वप्रासादाद् व्यपगत तिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य।
राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदयेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा
लब्ध्वा चायुः शताब्दं दर्शादेनसहितं शूद्रकोऽग्नि प्रविष्टः।। मृच्छकटिकम्, 1/4

xlvi परस्पर विरोधिन्योरेकसंश्रय दुर्लभम्।
संगतं श्री सरस्वत्योर्भूतयेऽस्तु सदा सताम्।। विक्रमोर्वशीयम्, 5/24

xlvii सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वे भद्राणि पश्यतु।
सर्वः कामानवाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु।। वही, 5/25

xlviii अक्षयोस्तु गोब्राह्मण – प्रसन्नोऽस्मि, 1/13 का (गद्य)

xlix अद्याभिमन्युनिधनाज्जनितप्रकोपः
सामर्षकृष्णधृतरश्मि गुण प्रतोदः।
पार्थः करिष्यति तदुग्रधनुः सहायः
शान्ति गमिष्यति विनाशभवाप्य लोकः।। दुतघटोत्कचम् 1/5

l सर्वत्र सम्पदः सन्तु नश्यन्तु विपदः सदा।
राजा राजगुणोंपेतो भूमिमेकः प्रशास्तु नः।। कर्णभारम्, 1/25

li धीरस्याश्रमसंश्रितस्य वसतस्तुष्टस्य वन्यै फलै
र्मानार्हस्य जनस्य वल्कलवत स्त्रासः समुत्पाद्यते
उत्सिक्तो विनयादपेतपुरुषो भाग्यैश्चलैर्विस्मतः
कोऽयं भो ! निभृतं तपोवनमिदं ग्रामीकरोत्याज्ञया ।। स्वप्नवासवदत्तम्, 1/3

lii तदस्मिन ब्रह्माद्यैस्त्रि दशगुरुभिर्नाथितशमे
तपस्तेजोधाम्नि स्वयमुपनतब्रह्माणि गुरौ।
निवासे विद्यानामुपहितकुटुम्बव्यवहृति
र्भवानेव श्लाघ्यो जगति गृहमेधी गृहवताम्।। महावीरचरितम्, 1/11

liii परिषदियमृषीणामत्र वीरो युधाजित्सह नृपतिरमात्यैरोमपादश्चवृद्धः।
अयमविरतयज्ञो ब्रह्मवादी पुराणः प्रभुरपि जनकानामद्रुहो याचकास्ते।। महावीरचरितम्, 3/5

liv विद्याकल्पेन मरुता मेघानां भूयसामपि।
ब्रह्मणीव विवर्तानां क्वापि विप्रलयः कृतः।। उत्तररामचरित, 6/6

lv राजा अहो ! स्वर्गादि – वगाढोऽस्मि। अभिज्ञानशाकुन्तल, 7/11 का (गद्य)

lvi शरीरं क्षामं स्यादसति दयितालिङ्गन सुखे,
भवेत्सास्त्रं चक्षुः क्षणमपि न सा दृश्यत इति।
तया सारङ्गाक्ष्या त्वमसि न कदाचिद्विरहितं,
प्रसेक्त निर्वाणे हृदय परितापं व्रजसि किम् ?।। मालविकाग्निमित्रम्, 3/1

lvii क्षीरिण्यः सन्तुगावो, भवतु वसुमती सर्वसंपन्नसस्या,
पर्जन्यः कालवर्षी, सकलजनमनोनन्दिनो वान्तु वाताः।
मोदन्तां जन्मभाजः सततमभिमता ब्राह्मणाः सन्तु सन्तः
श्रीमन्त, पान्तु पृथिवी प्रशमितरिपवो धर्मनिष्ठाश्च भूपाः।। मृच्छकटिकम्, 10/61